R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ३९ | सितम्बर १९९० | अङ्क १२

शब्द

सत्संगत में बैठ के प्राणो, सत् की संगत कर ले तू।
गुरु वचन अनमोल हैं हीरे, अपना दामन भर ले तू।१।
मन अपने को काबू करके, अपनी सुरत टिका ले तू।
देख नजारा अपने अन्दर, और सत् गुरु को पा ले तू।२।
जन्म जन्म की बन्द कोठरी, गुरु कृपा से ताले खोल।
झाड़ लगा कर साफ को अब, प्रेम की जोत जगा ले तू।३।
तीसरा तिल और सहस्र-कमल दल, त्रिकुटी का दर्शन कर लो।
दसवा द्वारा सुन्न महल का, हंसो को प्रसन्न कर लो।४।
महा सुन्न और भंवर गुफा से, सत् लोक को चलकर के।
अलख अगम अनामि पद में, काल पिछाड़ो दल कर के।५।
चोथे दल में सुरत जो पहुँचे, जन्म मरण से न्यारी हो।
ऐसा देश सुदेश मिला अब, सतगुरु की बलिहारी हो।६।
अहम् रहा नहीं रही है ममता, ममता गई क्षमता कहाँ।
आनन्द आनन्द आनन्द पाया, 'गाफिल' आनन्द सदा वहाँ।७।

मासिक सन्देश

परमदयाल सद्गुरू हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वरचन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश

मेरे परम प्रिय सत्संगियों !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई ।

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको बताया था कि श्रीमती रमाबाई और उनके सुपुत्र अखलेश मुझे भोपाल के रटेशन पर मिल गये । उन्हें यह मालूम नहीं था कि मैं पौने बारह बजे की गाड़ी से भोपाल पहुँच रहा था । वह तो अनायास ही पहले पहुँच गये थे । जब उन्हें पता चला कि मैंने भी उनकी प्रतीक्षा के बाद प्रतीक्षालय जाने का इरादा छोड़कर शहर की तरफ चल पड़ा था, तो उनको यह सुनकर बहुत तसल्ली हुई क्योंकि उन्होंने महसूस किया कि वह तो २ बजे की गाड़ी की प्रतीक्षा करते-२ भटक जाते । जैसा मैंने कहा है कि जो काम आप सद्भावना और सच्चे दिल से हाथ में लेते हैं, उसमें कभी रुकावट नहीं आती । अगर कभी रुकावट आ भी जाये, तो आगे चलकर वह रुकावट लाभदायक सिद्ध होती है । प्रसंगवश मैं आपको इस सम्बन्ध में अपना एक अनुभव बताना चाहता हूँ । वैसे तो मेरे जीवन के अनेक अनुभव ऐसे हैं जिसमें यह साबित होता है कि जब भी मेरे किसी काम में, किसी व्यक्ति की दुर्भावना के कारण रुकावट आयी, तो वह आगे चलकर पुर्णतया लाभदायक सिद्ध हुई । किन्तु यहाँ पर मैं आपको एक मामूली सी घटना सुनना चाहता हूँ, जिसमें यह सिद्ध होता है कि हम कभी भी भूल नहीं करते हैं । जब साधारणतया ऐसा लगता है कि हमने भूल की है, कुछ समय के

बाद यह पता चलता है कि वह भूल भविष्य की किसी अच्छाई के लिये की गयी थी। लेकिन यह तभी होता है जब आपका जीवन सदगुरु के शरणांगत होने के कारण सहज हो जाता है। और जब आपने अहंकार और अभिमान नहीं होता। यह घटना करीब २५ साल पहले की है।

हम उन दिनों गर्मियों की छुट्टी में कुछ समय के लिये अमेरिका गये हुए थे। वर्णीनिया में हम अपने एक मित्र टोडरोथ रोक के यहाँ रोनोक शहर में ठहरे हुए थे। मुझे दो तीन दिन के लिये फ्लोरीडा सत्संग देने के लिए जाना था। उसके बाद हमारा प्रोग्राम कुछ दिन के लिए रोनोक नगर से ४० मील दूर अपने मित्र डा० मैकेण के यहाँ ठहरने का था। हमने अपना यह प्रोग्राम मेरे साथे डा० मोहन मनुजा को इंग्लेंड में भेज दिया था, क्योंकि उन्हीं दिनों उसकी एक अंग्रेज लड़की मेरी से शादी हुई थी और उन दोनों को अमेरिका कुछ दिन के लिए आना था। हमें यह मालूम नही था कि वे कब और कहाँ हमें अमेरिका में मिलेंगे। फ्लोरीडा जाते समय मैंने टाड को और भाग्य माताजी को कह दिया था कि मैं सोमवार सायकाल ७ बजे बस के द्वारा रोनोक पहुँचुंगा। रविवार को मैं सायंकाल की बस से टैम्पा फ्लोरीडा से रोनोक के लिए रवाना हुआ। मुझे रास्ते में एक शहर जैक्सन बिल पर आधी रात को बस बदलनी थी। मैं एक बस से उतरकर अपना अटेचीकेश हाथ में लिये हुये बस की प्रतीक्षालय में बैठ गया। करीब आधे घण्टे के बाद लाडस्पीकर पर सूचना प्रसारित की गयी कि रोनोक की बस कुछ ही मिनटों में रवाना होने वाली है। इस सूचना के साथ २ वाशिगटन जाने वाली बस की सूचना भी सुनी गयी। मैं जल्दी जल्दी में रोनोक की बस की बजाय भूल से वाशिगटन डी० सी० जाने वाली बस में बैठ गया। एक घण्टे के बाद जब बस करीब ७० मील चल चुकी थी, मैंने

ड्राइवर से पूछा "श्रीमन् ! क्या यह रोनोक जाने वाली बस है ? उसने मुझे मधुर शब्दों में उत्तर दिया, "नहीं श्रीमन् ! यह तो एक्सप्रैस बस है, जो वाशिंगटन डी०सी० जा रही है। यह रोनोक से नहीं गुजरेगी।" मैंने दबे शब्दों में ड्राइवर से कहा "मुझे अफसोस है कि मैं भूल से इस बस बस पर बैठ गया। मुझे तो सायंकाल ७ बजे तक रोनोक पहुँचना था। ड्राइवर ने कहा, "आप कोई चिन्ता न करें। यह बस नार्थकैरोलाइना में प्रातः ११ बजे तक सेलमनगर पहुँचेगी। आप वहाँ उतरकर रोनोक की बस पकड़ लें। आप ७ बजे की बजाय ३ बजे दुपहर में रोनोक पहुँच जायेंगे। इसलिए ही तो मैंने आपकी टिकट देखकर आपको इस बस में बैठने दिया था।" मेरे प्यारे सत्संगियो ! आप खुद ही लगा लो कि क्या यह भूल, भूल थी ? अन्दाजा अगर भूल थी, तो वह किसी मकसद के लिये थी। जब मैं ७ बजे की बजाय ३ बजे दुपहर को रोनोक पहुँच गया, मैंने टाड को टैलीफोन से बातचीत करते हुए बस के अड्डे पर आने को कहा ताकि वह मुझे भाग्यमाताजी के पास अपने घर ले जायें। टाड ने मुझे टेलीफोन पर कहा, "डा० शर्मा ! श्रीमती शर्मा तो प्रातःकाल ही डा० मैकेब के यहाँ लिन्च वर्ग चली गयी थी। उसका भाई डा० मनुजा और उसकी पत्नी डा मैकेब के यहाँ आये हुए है और आज सायंकाल ७ बजे उनके स्वागत में दावत दी गयी है। अब आपको लिन्च बर्ग चलता है हम तो समझ रहे थे कि आप इस दावत में शामिल नहीं हो सकेंगे। यह बहुत अच्छा हुआ कि आप जल्दी आ गये।" थोड़ी देर के बाद टाड अपनी कार लेकर बस स्टैंड पर आ गया और उसने मुझे पौन घन्टे के अन्दर डा० मैकेब के घर पहुँचा दिया। मुझे देखकर सभी लोग बहुत प्रसन्न हुए। खासकर डा० मनुजा और उनकी पत्नी मेरी मनुजा में ज्यादा खुश थे।

मेरे जीवन के सैकड़ों अनुभव ऐसे है, जिनसे यह साबित होता

है कि अगर आप जीवन में यह न भूलें कि आपकी बागडोर उसी परमतत्व मालिके कुल के हाथ में है, जिसका विष्णु रूपी ब्रह्माण्डी अंश इस सारे जगत की रक्षा कर रहा है, तो आपको कभी भी किसी भी परिस्थिति में निराशा नहीं हो सकती। नाम सुमिरन का मतलब यही है कि हम क्षण-क्षण में उसी मालिक की तलाश में सजग रहें और निश्चिन्त रहें। क्योंकि आम आदमी यह भूल जाता है कि मन किसी बिन्दु पर टिक जाता है, तो उसके अन्दर की विष्णु शक्ति रूप धारण करके, उसकी पल-पल में रक्षा करती है। इसलिए उस जीत को शुरू शुरू में बाहरी सहारे या बाहरी गुरु से प्रेम करने की जरूरत रहती है। अगर यह प्रेम ऐसे सच्चे सदगुरू से हो, जिसने अपना जीवन परमार्थ में लगा रखा है और जो अपने सच्चे अनुभव को इसलिए बाँटता है कि उसके सम्पर्क में आने वाले सभी लोग शरीर की दुर्बलता, मन की चिन्ता और आत्मा के अज्ञान से आजाद हो जाये, तो साधक के लिए यह सोने में सुहागा होता है। साधक बाहर की वस्तुओं, देवी देवताओं की पूजा आदि करने में अपना समय नष्ट करके केवल एक ही सदगुरु पर ध्यान लगाता है, तो वह बहिर मुखी न होकर, गुरुमुख बन जाता है। गुरुमुख वह है, जो अपने जीवित इष्ट को परमतत्व मानकर हर काम करते समय गुरु की मूर्ति का ध्यान रखता है और सदैव उसकी आज्ञा का पालन करता है। ऐसा श्रद्धा और प्रेम युक्त साधक मन मुख न होता हुआ, गुरु के प्रेम में ओत-प्रोत होकर अपनी मैं को भूल जाता है और उसे सब जगह तू ही तू दिखायी देना है। इसी अवस्था को जीवन मुक्ति कहा जाता है। जीवन मुक्त बाहर के सभी सहारों को छोड़कर, अन्तुमुखी हो जाता है। और वह दातादयाल जी के नीचे दिये गये शब्द को अपने जीवन पर लागू कर देता है—

ना हो हमारा किसी से नाता, न हम किसी का सहारा ढूंडे ।
रहें सदा तेरे ही सहारे दयाल दाता कृपाल स्वामी ।।

मेरे परमप्रिय सदगुरु रूप सत्संगी भाई और बहनो ! इसलिए ही मैं आपके विश्वास को सचाई बताकर तोड़ता नहीं हूँ बल्कि उसे और भी मजबूत बना देता हूं । यही कारण है कि में आपको हर मासिक सन्देश में अपने सच्चे अनुभव बताता हूँ । ऐसा करने में मेरा निजी स्वार्थ नहीं रहता । हाँ उसमें एक लक्ष्य सामने रहता है और वह यह है कि मैं अपने परम गुरु परम दयाल जी महाराज की आज्ञा का हर क्षण पालन करता रहूँ और जो व्यापक प्रेम की अवस्था मुझे मिली है उसको आपसे बाँटता रहूं । मेरे इस व्यवहार से, सत्संगों के द्वारा, लेखों के द्वारा और मासिक सन्देश के द्वारा आप पर अच्छा प्रभाव अवश्य पड़ेगा । आप एक न एक दिन मेरे जैसे बन जायेंगे और मौज में रहने लगेंगे ।

हम भोपाल में आधे घण्टे के लिये अखलेश की ससुराल में रुके क्योंकि उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उज्जैन रवाना होने से पहले, मैं उनको आशीर्वाद अवश्य दूं । आप अनुमान लगाइये कि आधी रात के डेढ़ बजे किसी भी शरीफ आदमी के घर पर जाना और उसकी नींद भंग करना कितनी अनुचित बात है । एक साधारण व्यक्ति होने के नाते और थकावट के कारण मेरे लिए भी वहां रुकना अनुचित और दुखदाई था । किन्तु मैं रमाबाई और अखलेश की प्रेम मयी प्रार्थना को न मंजूर नहीं कर सकता था ।

इस झटपटे समय पर भी अखलेश के ससुराल वालों ने हमारा पूरा स्वागत किया और नाश्ता आदि भी पेश किया । सब घर वालों को मेरे वहाँ पहुँचने पर बहुत प्रसन्नता हुई, यह उनके चेहरों से साफ दिखाई दे रहा था । सत्संगियों में इस प्रकार का प्रेम और इस प्रकार की श्रद्धा देखकर सहज में ही आशीर्वाद निकल जाता है । यह

अनुभव हर स्थान पर मुझे चिताना रहता है कि मैं परम दयालजी महाराज की आज्ञा के अनुसार निरन्तर सत्संगियों की सेवा करूं और उन्हें आराम पहुँचाऊं। रात्रि के २ बजे हम रमाबाई द्वारा लायी गयी टैक्सी से, उज्जैन के लिये रवाना हो गये। करीब २० कि०मी० दूर गाड़ी का एक पहिया बैठ गया। ड्राइवर बहुत ही समझदार नौजवान था। उसने तुरन्त पहिया बदल दिया और दूर पहले पहिये में पन्चर लगवाने के लिये एक मिस्त्री की दुकान पर रुका। मुझे यह देखकर अत्यन्त अचम्भा हुआ कि रात के २ बजे भी, उस मिस्त्री की दुकान खुली थी और वह एक बड़े ट्रैक्टर के टायर की मरम्मत में लगा हुआ था। अचम्भे के साथ २ मुझे इस बात पर नाज हुआ कि मेरे प्यारे भारत निवासी परिश्रम करने में, विश्व के किसी भी अन्य देशवासियों के मुकाबले में सबसे आगे हैं। विश्व भर के धनाड्य से धनाड्य देशों में घूमने के बाद मैं कह सकता हूँ कि यदि हमारे देश के नेता सत्य का पालन करें और भारत को रिश्वत खोरी से बचायें, तो हमारा देश आर्थिक दृष्टि से भी सभी देशों का शिरोमणी साबित हो सकता है। हमारे देश में किसी चीज की कमी नहीं है। भारत में इतना अधिक काला धन जमा है, कि यदि उसे सफेद बनाकर इस्तेमाल किया जाये, तो हमारा देश आज भी अमेरिका को खरीद सकता है। हमें भारतवासी होने का गौरव है। यदि हमारी राजनीति स्वच्छ हो जाये और सच्चे सेवाभावी लोग आगे आ जायें, तो इस देश का राज्य राम राजा का नमूना बन सकता है। कोई भी सच्चा सन्त या सदगुरु बिना देश भक्ति के अध्यात्मिकता नहीं फैला सकता। हमारा शरीर जिस मिट्टी से बना है और जो खुराक उस शरीर का पालन पोषण करती है, वह हमारी माँ भारत की धरती है इसलिए हर मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह अपनी मात्र भूमि की सेवा रक्षा करे।

वह समय आने वाला है, जब भारत राष्ट्र की बागडोर कर्मठ,

निष्काम कर्म योगियों के हाथ में होगी और अध्यात्मिकता से ओत-प्रोत संस्कारों वाले व्यक्ति भारत को फिर से, हर प्रकार से, सम्पन्न समृद्धि शाली सशक्त और विश्व भर में सदभावना और प्रेम फैलाने वाला राष्ट्र बना देंगे। इसी माध्यम से मानवता धर्म सारे विश्व का धर्म बन जायेगा और इस जगत में हिंसा और दानवता का बोलबाला होगा। इस परिवर्तन के आसार सब जगह दिखायी दे रहे है। सभी धर्मों के द्वारा मानवता की माँग की जा रही है। इसलिए ही परम-सन्त दातादयाल महर्षि शिव ब्रतलाल जी ने और परमसन्त परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज ने अनामी धाम से उतर कर जगत कल्याण के लिये मानवता धर्म की शिक्षा का प्रसार किया है। आधे घन्टे के अन्दर उस निपुण मिस्त्री ने हमारी गाड़ी के टायर की मरम्मत कर दी और हम करीबन ४ बजे प्रातःकाल श्रीमती रमादेवी के नये घर पर, सुरक्षित पहुँच गये।

यह घटना १३ फरवरी की है। उसी दिन उज्जैन, इन्दौर तराना और आसपास के सत्संगी भारी संख्या में मुझे मिलने के लिये। इन सब में, उज्जैन में एक केन्द्र स्थापित करने का बड़ा उत्साह है। मुझे आशा है कि उनकी यह इच्छा अवश्य पूरी होगी। इस इलाके में श्री सूर्य नरायन भट्ट आचार्य हैं और वह उज्जैन तराना इन्दौर और भोपाल के सभी सत्संगियों को श्रीमती आचार्य रमाबाई के सहयोग से आपस में मिलजुल कर सत्संगों का कार्यक्रम बनाने का प्रयास कर रहे हैं। इनके इलाबा रमाबाईजी के छोटे भाई श्री महेन्द्र गर्ग, जो इन्दौर में उद्योगपति हैं, बहुत परिश्रम में और काफी खर्चा करके मेरे सत्संग के दौरे को हमेशा सफल बनाते हैं। रमाबाई के घर पर श्री महेन्द्र गर्ग और आचार्य सूर्यनरायन भट्ट मेरे साथ काफी समय तक, भविष्य के कार्यक्रमों को सफल बनाने के सम्बन्ध में बहुत महत्व-पूर्ण बातचीत करते रहे। मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि आचार्य भट्ट मध्य प्रदेश में, मेरे अनुपस्थिति में सत्संगियों की देखभाल करते

हैं और वह एक सिद्धि प्राप्त आचार्य है। इसी प्रकार श्रीमती आचार्य रमाबाई के संस्कार बचपन से ही सन्तमत के वातावरण के कारण सुदृढ़ हैं। परमदयालजी महाराज ने उन्हें स्त्रियों के मार्गदर्शन के लिये आचार्य पदवी दी थी और इसी वर्ष बैसाखी पर मैंने उन्हें मानवता का चोला पहनाया था। वह उज्जैन और तराना के सत्संगों में विशेषकर मेरा और मेरे साथियों का ठहरने आदि का सुचारू प्रबन्ध करती हैं। मानवता का चोला पहनने के बाद वह स्त्रियों को नामदान देने का भी कार्य करेंगी। सायंकाल श्री महेन्द्र गर्ग और श्रीमती रमाबाई मुझे बिरला मंदिर दिखाने के लिए नागदा ले गये। वास्तव में यह मंदिर देखते ही बनता है। इसके चारों तरफ बहुत सुन्दर उद्यान, हरे भरे घास के मैदान वृक्ष और फुलवारियाँ हैं। एक छोटे स्थान पर ऐसा विशाल मंदिर बनवाने का उद्देश्य यह था कि नागदा एक जंगशन स्टेशन है, जो देहली और बम्बई के बीच में स्थित है और वहाँ पर एक बहुत बड़ी कपड़े की मिल भी है। यहाँ पर हजारों लोग काम करते हैं। इस मंदिर में लक्ष्मी नरायन की मूर्तिया हैं। इनके इलावा शिवालय है और दुर्गा का मंदिर भी है। वास्तव में ऐसा सुन्दर मन्दिर एकान्त स्थान पर होने के कारण उन लोगों के लिए एक वरदान है, जो प्रातः और सायंकाल सुमिरन, ध्यान ओर भजन में लगकर शान्ति का अनुभव करना चाहते हैं। सौभाग्यवश उसी दिन साय काल आचार्य शब्दानन्द और कु० साधना को होशियारपुर से नागदा पर पहुँचना था और श्रीमती रमाबाई ने, उन्हें उज्जैन ले जाना था। मन्दिर देखने के बाद हम, नागदा स्टेशन पर पहुँचे और उसी दिन साय काल हम सब आचार्य शब्दानन्द और कु० साधना के साथ, उज्जैन वापस लौट आये।

१४ फरवरी प्रातःकाल हम सब ऐटा को रवाना हो गये क्योंकि इस बार उज्जैन और तराना का सत्संग ऐटा में ही आयोजित किया

गया था ऐटा एक छोटा सा कस्बा है, जहाँ पर श्री राधेश्याम और श्री बलराम के मामा श्री गणपति और उनके भाई श्री जगदीश और दूसरे सत्संगी रहते हैं। मुझे यह देखकर बहुत प्रसन्नता हुई कि ऐटा में हमारे निवास का और सत्संग के पंडाल का बहुत शानदार प्रबन्ध किया गया था। गाँव के कोने पर बड़ा भारी शामियाया सजा हुआ था और एक भव्य मंच बनाया गया था। सत्संगी भी हजारों की संख्या में दूर-२ से आये हुए थे। दो दिन लगातार सत्संग में लोगों ने भारी संख्या में दिलचस्पी ली। हर सत्संग में तराना की भाँति, रुहानियत का ऐसा वातावरण बना कि सत्संगी सत्संग की धारा में निमग्न हो गये। सत्संग के बाद, हर वर्ष की भाँति, गांव के रहने वाले श्रद्धालु भोले भाले सत्संगी टोलियों में बैठकर सत्संग के सार को समझने के लिए आपस में वार्तालाप करते रहे। इस इलाके के प्रश्वर कवि श्री शिव उपाध्याय ने सत्संगों के गहरे प्रभाव पर उच्च कोटि की, अपने द्वारा लिखी गयी बहुत सुन्दर कविता लिखी, जिससे सभी को प्रेरणा मिली। आचार्य श्री भट्ट ने भी आखरी सत्संग में सत्संगों का सार बताते हुए, सुन्दर समीक्षा की। तीसरे दिन हम ऐटा से रवाना होकर दुपहर तक उज्जैन पहुँच गये। उसी रात को हम ट्रेन से रवाना होकर इटारसी पहुँच गये। मैं आपको यह बताना भूल गया कि ऐटा के सत्संगों में मैंने सत्संगियों को यह बताया कि इस बार २२, २३, २४ फरवरी को हजूर दातादयाल महर्षि शिवब्रत लाल (दातादयाल) की १३०वीं वर्ष गांठ, राधास्वामी धाम गोपीगंज में मनाई जानी थी। मैंने उन्हें यह बताया कि पूर्ण अवतार सतपुरुष पूर्णधनी महर्षि शिवब्रत लालजी महाराज २३ फरवरी १८६० महा शिवरात्रि के दिन प्रगट हुए और २३ फरवरी १९३९ महाशिव रात्रि के दिन उन्होंने दूध मंगाकर स्नान करके, सबके सामने समाधि लगाई और निजधाम चले गये। इस बार २३ फरवरी को पुनः महा शिव

रात्रि का पर्व था। इसलिए हमने दातादयालजी महाराज के जन्म और निर्वाण दिवस को मनाने के लिए २३ फरवरी को विशाल सत्संग और भंडारा आयोजित किया था। उज्जैन तराना ऐटा और इन्दौर के सत्संगियों ने निश्चय किया कि वे सब लोग भारी संख्या मे राधास्वामी धाम पहुँचेंगे।

इटारसी में सबसे पहले हम श्री जोगेन्द्रसिंह के सुपुत्र श्री चरण जीत सिंह के घर गये, जहां पर हमें ठहरना था। पहले ही दिन इटारसी के सत्संगी भारी संख्या में, मुझे मिलने के लिए और परामर्श के लिए गुरु हो गये। इस नगर के अधिकतर सत्संगी सिन्धी हैं और गरीब हैं। इनकी श्रद्धा और इनके विश्वास का पारावार नहीं है। इसलिए इस बार तीनों दिन सत्संग सिन्धियों के इलाके में हुए। एक सत्संग श्री चरनजीतसिंह के यहां भी हुआ, जिसमें इटारसी के और आसपास के इलाके सत्संगी बड़ी श्रद्धा से सम्मिलित हुए। हर वर्ष की भांति मेरा प्यारा कटनी का सत्संगी अर्जुन दास सभी सत्संगों में मेरे पास रहा। कटनी के पुराने सत्संगियों में से श्रीअर्जुन दास और श्री विष्णु मर्चेन्ट लगातार मेरे से सम्बन्धित रहे हैं और मानवता मंदिर की आर्थिक दृष्टि से लगातार सहायता करते रहते हैं। इन दोनों का जीवन मानवता धर्म के असलों पर चल रहा है। मैं सच्चे दिल से अर्जुनदास तथा उसके परिवार और श्री विष्णु मर्चेन्ट और उसके परिवार को सदभावना और आशीर्वाद देता हूँ और चाहता हूँ कि सभी सत्संगी, इससे प्रेरणा लेकर अपनी श्रद्धा और विश्वास को दृढ़ बनाये ताकि उनके लोक और परलोक दोनों सुधर जायें। इटारसी के सत्संगों में, मैं कई बार हिन्दी भाषा के साथ २ सिन्धी भाषा भी बोलता हूँ, जिसमें हमारे सिन्धी भाई और बहनें और नये सत्संगी बहुत प्रभावित होते हैं। शुरू २ में १९८३ में जब मैंने इटारसी में कुछ सत्संग सिंधी भाषा में दिया, तो श्री सुन्दर

लाल की वृद्धा माता ने कहा, "अब बाबा सिन्धी बोली सीखकर आ गया है। हमें इस बात की खुशी हैं।" उनका कहने का अभिप्राय, यह था कि परमदयाल जी महाराज मेरे रूप में आकर स्वयं सिन्धी भाषा में सत्संग देने लगे हैं। श्री सुन्दरलाल की माता का यह सुन्दर कथन प्रेम और भक्ति से ओत-प्रोत था। वह इन शब्दों में, सारी संगत के भावों को व्यक्त कर रही थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इटारसी की संगत का बच्चा २ मेरे से अगाध प्रेम करता है। २ बच्चे राम और श्याम १९८३ से ही इटारसी में रात-दिन मेरे साथ रहते हैं। अब यह बच्चे बड़े हो गये हैं। मैं सच्चे दिल से चाहता हूँ कि यह दोनों बच्चे शिक्षा प्राप्त करके अपने जीवन में सफल रहें और अपने परिवार का अच्छी तरह से पालन पोषण करें। मैं आपको सच कहता हूँ कि यदि आप इटारसी के सत्संग के समय मेरे स[illegible] मंच पर बैठकर, संगत पर दृष्टि डालें, तो आप स्त्री, पुरुषों बूढ़ों, नवयुवकों और बच्चों के चेहरों पर खुशी और प्रेम टपकता हुआ देखकर, प्रेम के आंसू बहाने लगेंगे।

मेरे परमप्रिय सत्संगियों ! मध्य प्रदेश के सभी भागों में रहने वाली आपके भाई बहन मानवता परिवार के आदर्श सदस्य हैं। इसलिये बार २ मेरे मन में यह विचार पैदा होता है कि कम से कम पांच साल में एक बार हम सभी सत्संगियों का ऐसा सम्मेलन करें कि अलग २ प्रान्तों के और अलग २ देशों के, अलग २ वेशभूषा पहनने वाले और अलग २ देशों के अलग-२ बोलने भाषा बोलने [illegible] सत्संगी एक जगह पर मिलकर सत्संग सुनें और एक साथ भोजन करें। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरी यह इच्छा बहुत जल्दी फलीभूत होगी। आप सब जानते हैं कि मानव धाम का भवन निर्माण देहली से २३ कि०मी० दूर गाजियाबाद और मोदीनगर के बीच शुरू हो गया है। वहां पर बाहर से आने वाले सत्संगियों के ठहरने के लिए

विश्राम गृह होंगे।

आपको यह विदित है कि इस मानवधाम का निर्माण करने वाली देहली की अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सभा है जिसके मुख्य कार्यकर्ता आचार्य श्री के०पी० वर्मा, श्रीमती राजसलवान, श्री यशपाल भाटिया श्री ऋषिप्रकाश गुप्ता, श्री एस० डी० शर्मा, डा० एम० के० नारंग और श्री पवन कुमार शर्मा आदि भाग्य माता जी की अध्यक्षता में दिन-रात इस शुभ कार्य में लगे हुए हैं। जैसा कि आपको एक अन्य सूचना के द्वारा बताया गया है 'फकीर सत्संग भवन' का निर्माण शुरु गया है किन्तु कुछ आर्थिक कठिनाइयों के कारण उसमें बाधा आ रही है। मुझे पूरी आशा है कि मेरे प्यारे सत्संगियो, यह समझते हैं कि मानव धाम भविष्य में लाखों सत्संगियों को प्रेरणा देने वाला केन्द्र नेगा, अपनी-अपनी सामर्थ्य के मुताबिक इस परिस्थति में थोड़ा बहुत अनुदान श्री एस० डी० शर्मा क्वाटर नं० २ टीचर्स कालोनी, मोदीनगर, जिला गाजियाबाद (उ० प्र०) को भेजेगे। हम चाहेंगे कि हर सत्स गी परि ार इसमें योगदान दे ताकि उनकी आने वाली पीढ़ियाँ मानवता धर्म से लाभ उठा सकें। यह अनुदान सेक्रेटरी अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सभा के नाम से चैक या मनीआडर के रूप में ऊपर दिये गये पते पर भेजना उचित होगा। बहुत शीघ्र ही मानव धाम में गतिविधि शुरु हो जायेगी। मैंने यह बात प्रसंगवश आपसे कही है। हमारे सत्स गी हमेशा ऐसे अवसरों पर योगदान देते इस बात का एक नमूना हमें २२, २३, २४ फरवरी में दातादयाल जी महाराज के जन्म और निर्माण उत्सव मानते व्यक्त मिला। जैसा मैं आपको बतारहा था कि हम इटारसी से रवाना होकर २१ फरवरी को इलाहाबाद पहुँच गये।

हम सीधे श्री सुमित्रा कुमार जी के घर पर गये। वहाँ पर कुछ सत्स गी पहले से मौजूद थे। उनमें से मुख्य सुमित्रा कुमार जी के बड़े

भाई श्री त्यागच्याग डा० राजाराम जी जिन्हें त्याग च्याग का नाम उनके नाना श्री दातादयाल जी महाराज ने दिया था और श्री अमर - नाथ कुन्दरा के नाम उल्लेखनीय है। राधास्वामी धाम इलाहाबाद से करीब ७० किमी दूर है। कुछ सत्संगी वहाँ से आये और उन्होंने बताया कि धाम पर सैकड़ों सत्संगी पहुँच चुके थे और उनमें से आचार्य कैप्टन लालचन्द्र जी दो दिन से बहुत अच्छे सत्संग करा रहे थे। उसी दिन सायंकाल ७ बजे सुमित्राकुमार जी के घर पर सत्संग हुआ। इसमें भी काफी संख्या में इलाहाबाद के सत्संगी मौजूद थे। दूसरे दिन प्रातःकाल तक श्री कृष्ण मोहन तिवारी भी अपनी कार में सुमित्रा कुमार जी के घर पहुँच गये। श्री अमरनाथ जीं कुन्द्रा अपनी गाड़ी ले आये और हम सब प्रातःकाल ९ बजे तक राधास्वामी धाम पहुँच गये। हमें यह देखकर प्रसन्नता हुई कि आध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश से सैकड़ों की संख्या में सत्संगी इस उत्सव को मनाने के लिये बड़े उत्साह से पहुँचे। २२ सायंकाल और प्रातः २३ फरवरी को बड़े शानदार सत्संग हुए जिसमें मेरे अलावा आचार्य कैप्टिन लालचन्द्र, आचार्य के० पी० वर्मा आचार्य श्री शब्दानन्द जी ने भी सत्संग दिये। २३ फरवरी सायंकाल हम बनारस के लिये रवाना हो गये क्योंकि वहाँ पर उसी रात को टी० ओ० साहब के घर पर विवेकानन्द नगर में सत्संग आयोजित था। इन सभी सत्संगों के सम्बन्ध में आपको आचार्य श्री शब्दानन्द ने दौरे के एक विशेष विवरण में काफी कुछ बता दिया है।

इसलिये मैं आपको इस महान उत्सव की विशेष घटनाओं की संक्षिप्त सूचना ही दूंगा। हमारे छपे हुए प्रोगामों के मुताबिक हमें २४ फरवरी को इलाहाबाद से रवाना होकर २५ फरवरी को लखनऊ में सत्संग के लिये रुकना था। क्योंकि हम दो महीने के लम्बे दौरे को जल्दी समाप्त करके होशियारपुर पहुँचना था इसलिये हमारे प्रोगाम

में कुछ परिवर्तन हो गया। २४ फरवरी प्रातःकाल हम राधास्वामी धाम की प्रबन्धक कमेटी की बैठक के बाद इलाहाबाद के लियेरवाना गये। इस बैठक में बहुत महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये। राधा स्वामी धाम पर हों इस केन्द्र के जीणोद्धार के लिये ३० हजार रुपए की धनराशि एकत्रित हो गई। मैंने प्रबन्धक कमेटी में हर वर्ष राधा स्वामी धाम के लिये ५० हजार रुपये की धनराशि एकत्रित करके धाम पर निर्माण कार्य को चालू करने का वचन दिया। प्रबन्धक कमेटी ने पूर्ण रूप से मुझे धाम के विकास के लिये जिम्मेदारी दीं। मैं कई वर्षो से यही सोच रहा था कि राधास्वामी धाम को साधना का अन्तरांष्ट्रीय प्रशिक्षिण केन्द्र बना देना चाहिए। आचार्य शब्दानन्द बचपन से दातादयाल जी की गोद में पले हैं। वह हर समय मेरे साथ रहते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि श्री दातादयाल जी ने कहा था और किसी लेख में भी लिखा था कि उनका आध्यात्मिक पोता अर्थात परमदयाल जी महाराज का उत्तराधिकारी राधास्वामी धाम को फिर से बसायेगा। ऐसा लगता है कि मालिक की यही मौज है और दातादयाल महाराज की भविष्यवाणी सच प्रमाणिम होती दिखाई दे रही हैं।

तीन दिन का यह उत्सव बहुत सुन्दर और प्रभावशाली रहा। २४ फरवरी को दोपहर १२॥ बजे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग में मेरा प्रवचन आयोजित था और इसकी सूचना एक दिन से पहले ही समाचार पत्रों में छप चुकी थी। इसलिये हम सब सीधे इलाहावाद विश्वविद्यालय पहुँचे। दर्शन विभाग के अनुसंधान के निदेशक डा० संगम लाल पाण्डेय ने यह आयोजन किया था। इस प्रवचन में दर्शन विभाग के बी० ए०, एम० ए० और पी-एच० डी० के छात्र तथा अध्यापक गण मौजूद थे। मेने अपने वक्तव्य में यह

बताया कि किस तरह भारतीय दर्शन के पढ़ाने की समकालीन पश्चिमी और अमरीकी विश्वविद्यालयों में आवश्यकता है। मैंने पश्चिमी दर्शन के त्रुटियों को बताते हुए उनकी क्षति पूर्ति का सुझाव दिया। और बताया कि यह क्षतिपूर्ति केवल भारतीय दर्शन के प्रचार के द्वारा ही की जा सकती है। डा० संगम लाल पाण्डेय ने अपने भाषण में मेरे विचारों की पुष्टि की।

२४ फरवरी की रात्रि को हम श्री अमरनाथ जी कुन्द्रा के घर पर रहे क्योंकि हमें दो बजे प्रातःकाल इलाहाबाद रेलवे स्टेशन से होशियारपुर के लिये रवाना होना था। श्री कुन्द्रा और उनक परिवार ने हमारी बहुत सेवा की और श्री कुन्द्रा तथा उनके दोनों सुपुत्र हमें स्टेशन तक छोड़ने आये। हम रेलगाड़ी से वाया दिल्ली होते हुए २७ फरवरी को होशियारपुर पहुँच गये। इस सन्देश में सत्संग दौ की सूचना यहाँ तक ही पर्याप्त रहेगी। इन शब्दों के साथ मैं आपको सितम्बर के महीने की सद्भावना देता हूँ और चाहता हूँ कि आप इस सन्देश से प्रेरणा प्राप्त करके सुखमय और आनन्दमय जीवन का अनुभव प्राप्त करें।

सबको राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

[माह अगस्त के पृष्ठ ३५ से आगे, राधास्वामी योग]

चौवनवां वचन

दो मार्ग

उपनिषद कहती है कि जीवन के दो मार्ग हैं। एक प्रारम्भ में देखने में सुन्दर और विस्तृत प्रतीत होता है लेकिन ज्यों-ज्यों पग आगे की ओर पड़ता है त्यों-त्यों वह देखने में बुरा और संकीर्ण तथा अन्धकार युक्त होता जाता है। दूसरा सर्वथा इस से उल्टा है लेकिन ज्यों-ज्यों पग आगे की ओर पड़ता हैं वह देखने में अच्छा और विस्तृत प्रतीत होने लगता है।

पहला मार्ग स्वार्थ का है, दुनियाँ का है, संसार का है। मनुष्य इसे बहुत अच्छा समझता है। हर्ष, स्वाद आनन्द सुख पाता है। मान, प्रतिष्ठा, धन, दौलत हाथ आती है। लेकिन इसका परिणाम क्या होता है ? मान, प्रतिष्ठा जीवन का भार हो जाता है। 'जो इज्जत में आला,उसका मुंह हरदम काला' वह छोटे से छोटे आदमियों का दास हो जाता हैं और भयभीत रहता है कि कोई व्यक्ति उसकी मान प्रतिष्ठा को न बिगाड़ दे उसे हर समय अवसर देखना, चापलूसी करना, नम्र रहना और नीति कुशलता की पड़ी रहती है। यही दशा धन दौलत की भी होती है। चोर का डर, नातेदारों का भय, सरकारी कर्मचारियों की चापलूसी ! तात्पर्य यह है कि हर प्रकार की आपत्ति होती है। इन्द्रियों के सुख की आपत्ति और भी बुरी है रोग आता है दुख होता है। हृदय मस्तिष्क और शरीर निकमे हो जाते हैं। बदनामी उठानी पड़ती है। यह सब दुख भोग भागकर बेचैनी और व्याकुलता के साथ मरना पड़ता है।

दूसरा मार्ग परमार्थ का हैं। प्रारम्भ में मन और मस्तिष्क के संयमित और शिक्षित करने के समय थोड़ा सा नाम मात्र

को कष्ट प्रतीत तो होता है किन्तु जिस जिस प्रकार भावों में विशालता और विचारों में उदारता और परिस्थितियों में निडरता आती जाती है, उसी प्रकार आनन्द प्राप्त होता जाता है। जीवन उच्च और सुन्दर बन जाता है। किसी का भय नहीं, किसी का लालच नहीं, किसी की अभिलाषा और लालसा नहीं, किसी व्यक्ति या किसी वस्तु की आधीनता नही। परमार्थ के साथ स्वार्थ भी नहीं बिगड़ता। दुनियां का भी त्याग नहीं होता। हाँ, दुनियाँ का रूप समझ लिया जाता है और उससे बाहरी सम्बन्ध विच्छेद रहता है। शरीर स्वतन्त्र, मन स्वतन्त्र मस्तिष्क स्वतन्त्र ! जिस समय शरीर छोड़ने का समय आता है आनन्द, शान्ति और उपमा रहित सुख के साथ इस प्रकार का मनुष्य हंसते खेलते हुए यहाँ से सुगमता से चला जाता है।

अब सोचो, यह अच्छा है या वह अच्छा है ?

यह नहीं कहा जाता कि दुनियाँ को छोड़ दो। यहां न कहीं ग्रहण करने का प्रश्न है न त्याग का। केवल यथायोग्य व्यवहार करते हुए भक्ति के आदर्श को दृष्टि के सामने रक्खो और लोक परलोक दोनों ही का आनन्द तुमको मिलेगा। प्रत्यक्ष में यदि किसी अंश तक दुनियाँ की सम्पत्ति से वंचित होना पड़ता है तो उसका बदला इतना अधिक मिलता है कि जिसकी कोई सीमा नहीं है।

—:०:—

पचपनवां वचन

गुरु मुखता

वेदों की प्रार्थना है—"असतो माँ सद गमया" "तमसो मा ज्योतिर्गमया"। शब्दों की योजना और सुन्दरता और विचारों की दृढ़ता और व्याख्या की दृष्टि से यह प्रार्थना अत्यन्त सुन्दर

है। इसका अर्थ यह है—"असत से मुझको सत की ओर ले चल", और अंधेरे से मुझको प्रकाश की ओर ले चल", और "मृत्यु से मुझको जीवन की ओर ले चल"। असत, अन्धेरा और मृत्यु यह तीनों ही प्रिय हैं। जो सत्, ज्योति और जीवन है वही सत्, ज्योति और जीवन का आदेश कर सकता है। सत् असत् का रास्ता नहीं दिखाता क्योंकि सत् असत् का विरोधी हैं। प्रकाश अंधेरे से सम्बन्ध नहीं रख सकता क्योंकि प्रकाश अंधेरे का विरोधी है। जीवन मृत्यु को रास्ता परनहीं चला सकता क्योंकि जीवम और मृत्यु एक दूसरे के विरोधी हैं यह प्रार्थना गुरु से की गई है। गुरु ही सच्चा ईश्वर, सच्चा जीवनदाता और सच्ची सचाई की राह दिखाने वाला और सच्चे प्रकाश की ओर ले जाने वाला है। यह तीनों गुण गुरु में हैं। यही तीनों शिष्यों और चेलों में भी हैं। अन्तर केवल इतना है कि गुरु में सत्, ज्योति और अमृत निश्चयात्मक रूप में मौजूद है कि चेले में इनके वास्तविक अस्तित्व के साथ असत् अन्धेरा और मृत्यु के नफी (असत्) के विचार विद्यमान हैं। वह इनसे घृणा करता हैं। और उनके नाम से घबराता है। यही कारण है कि ऐसी प्रार्थना की गई है। चेले ने यहाँ तक समझ लिया है कि गुरु में ये गुण है और गुरु पथ-प्रदर्शक होने के योग्य है। यह आस्तिकता की पहली सीढ़ी है।

इस विश्वास को हृदय में बिठाना गुरु मुखता कहलाती हैं गुरुमुखता के दो अर्थ हैं।

प्रथम तो यह कि गुरु को मुख्य जानना, दूसरे यह कि गुरु के मुख से सचाई को स्वीकार करके गुरु के मुख से बोलना और उन्हीं के रंग रूप को स्वीकार कर लेना है।

उपनिषद् में ऐसी गाथायें आई हैं कि शिष्य को प्रकृति के

पदार्थों से ज्ञान हो गया है। उसके ललाट में ब्रह्म का महत तेज चमकने दमकने लगा है लेकिन शिष्य उसका विश्वास नहीं करता वह फिर भी अपने ज्ञान और अनुभव को गुरु के शब्द के आधीन करके सचाई के मार्ग में आना चाहता है क्यों कि बिना गुरु की सहायता के वह सच्चे ज्ञान की कमाई को पर्याप्त ओर सन्तोषप्रद नहीं समझता है। इन गाथाओं के अध्ययन से स्पष्ट रूप से प्रकट है कि प्रकृति की समस्त शक्तियाँ अपना ज्ञान देती हुईं अधूरी की अधूरी रह जाती हैं। गुरु की सहायता की आवश्यकता इस उच्च विवेक शक्ति के रखते हुए भी शेष रहती हैं। किन्तु शोक है कि आजकल उपनिषदो के पढ़ने वाले इस अन्तिम आदेश की आवश्यकता प्रतीत नहीं करते। यही कारण है कि उपनिषदों के पढ़ लेने पर भी वह ज्ञानो नहीं होते। जो व्यक्ति चाहे स्वयं उपनिषद् को पढ़ के अपना विश्वास कर ले। सुनी सुनाई बातों पर विश्वास न करे। यह गुरुमुखता है।

हिन्दू तो सनातन से ऐसा ही मानते जानते और करते हुए चले आ रहे हैं कि निगुरे को ज्ञान नहीं होता। मुसलमान सूफ़ियों का भी यही विचार है कि बिना गुरु के मुक्ति नहीं होती वह यों ही नहीं है किन्तु इस विश्वास और श्रद्धा की जड़ में सचाई छिपी है जिसका समझ लेना आवश्यक है।

जो ज्ञान सीधा प्रकृति के पदार्थों से प्राप्त किया जाता है, उसमें मनमता का अहंकार सम्मिलित रहता है और लाख प्रयत्न किया जाय वह दूर नहीं होता और अधोगति की ओर ले जाता है। इस कारण से गुरु मत बनने और गुरु मत स्वीकार करने की आवश्यकता है।

मन मता में दोष रहता है। गुरु मता दोष से रहित हो जाता है।

मन मता अपने ऊपर भरोसा रखकर चलता है और धोखा खा जाता है। गुरु मता गुरु के खपर भरोसा रखकर चलता हैं और धोखे से बच जाता है।

जंगल में भूला भटका हुआ पथिक रास्ता बताने वाले पर पूरा विश्वास करके अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंचने की आशा करता है। दूसरी अवस्था में सम्भव नहीं है कि वह रास्ता भटकने के झगड़े से बच जाय। कम से कम उसके दिल में भय तो रहेगा कि कहीं रास्ते से बेरास्ता न हो जाय क्योंकि जंगल में भिन्न-भिन्न और बहुत से रास्ते आते हैं। वह जानकार नहीं है और उसे पथ प्रदर्शक की बातों पर पूरा-पूरा विश्वास करना ही पड़ता है। यह रहस्य है और इसी कारण से जहाँ हमने योग साधन की पहिली विधि में सच्चे जिज्ञासू को यह बताया हैं कि वह स्वयं अपने आप खोज और पहिचान कर ले फिर गुरु के पास आकर उनके शब्दों का लाभ प्राप्त करे ताकि उसके विश्वास में नाम मात्र भी कमी न रहे।

यह गुरुमुखता और गुरु मता का रहस्य है।

"असतो मां सद गमया" 'तमसो मा ज्योतिर्गमया," "मृत्यो अमृतम् गमया," तू सत् है मुझे असत् से सत् की ओर ले चल। तू ज्योति स्वरूप हैं मुझे अंधेरे से ज्योति की ओर ले चल (अर्थात् अज्ञान से ज्ञान की ओर ले चल)। तू अमृत है मुझे मृत्यु से अमरत्व की ओर चलने का आदेश कर। यह प्रार्थना प्रकृति की किसी शक्ति से नहीं की गई किन्तु गुरु से की गई है। प्रकृति की कोई शक्ति बुराई से छुटकारा नहीं दिला सकती क्योंकि वहाँ इसका अभाव है। चंद्रमा के प्रकाश में चोर चोरी करता है। योगी योग के साधन में निमग्न होता हैं। चंद्रमा का प्रकाश दोनों ही का सहायक बना रहता है" बन्धन

से मुक्ति दिलाने वाला गुरु का स्वरूप है। इसके सिवा और कोई नहीं हैं।

सामान्य चेतन अज्ञान का विरोधी नहीं है। विशेष चेतन्य ही उसकी औषधि है और विशेष चेतन्य केवल गुरु का स्वरूप है। इस पर खूब विचार करो तब यह समझ में आयेगा। हम यों ही बिना समझे-बूझे नहीं कह रहे हैं। सारी आयु जिज्ञासा में व्यतीत हुई है। पढ़ा लिखा सोचा समझा, किन्तु उस समय तक निदिध्यासन (पूर्ण निश्चय) की सीढ़ी नहीं मिली जब तक गुरू के चरणों के नीचे बैठकर अध्यात्म का पाठ नहीं पढ़ लिया

गुरु की भावनाओं को अपने अन्दर ले कर गुरु की बातें समझ में आती हैं। गुरु के ज्ञान की सहायता से गुरु ज्ञान की उच्चता का दृश्य देखने में आता है। जब तक गुरु नहीं मिलता तब तक कचाई रह जाती है और सच्ची सफलता नहीं मिलती।

तुम में नेत्र हैं। जब तक तुम में नेत्र न हों तुम देखने के योग्य कहाँ हो सकते हो। मगर नेत्रों के होते हुए सूर्य्य से भी प्रकाश प्राप्त करने की आवश्यकता रहती हैं। तुम हजार आँख वाले हो यदि सूर्य प्रकाशित नहीं हैं ओर सूर्य से प्रकाश का लाभ नहीं उठाया गया तो आँखों का होना न होना बराबर है। गुरु का रूप अध्यात्मिक सूर्य हैं। गुरु मनुष्य के रूप में छुपे हुए ज्ञान के सूर्य हैं। पहिले उनसे अध्यात्मिक भाव और विचार लो। तब ही जाकर तुम को रूहानियत (अध्यात्म) की फुरना होगी। दूसरे ढंग से इसका प्राप्त होना कठिन।

—×—

छप्पनवां वचन

गुरु मुखता (लगातार)

पोथी सारवचन राधास्वामी कहती है :—

"सतगुरु अपनी दया से सदा जीवों की संभाल करते रहते हैं और चाहते हैं कि सब सेवक उनके चरणों में मुख्य प्रीति और प्रतीति करें पर यह मन नहीं चाहता कि ऐसी हालत जीव को प्राप्त होवे। इसी वास्ते वह भोगों की तरफ खेंचता है और अपने हुक्म में जीवों को चलाता है। इस वास्ते जीवों को चाहिये कि मन को घात से बच कर सत्गुरु के चरणों की संभाल रखे। इस वास्ते परख और संभाल का थोड़ा सा हाल गुरुमुख और मनमुख की चाल का लिखा जाता है। उससे हालत की परख करते हुये चलना चाहिये।

यह विषय अगले वचन में ज्यों का त्यों नकल कर दिया जाता है।

—×—

सत्तावनवाँ वचन

गुरुमुख और मनमुख की चाल

उसी पुस्तक से उद्धृत है :—

(१) गुरु मुख हर एक के साथ सच्चा बरतता है और बुराई की बातों से बचता है और किसी को धोखा नहीं देता है और जो काम करता है सत्गुरु के लिये और उनकी दया के भरोसे करता है।"

(१) मन मुख चतुराई और कपट से बरतता है और अपने मतलब के लिये औरों को धोखा देता है और अपनी बुद्धि और चतुराई का भरोसा रखता है और अपने आपको प्रगट करना चाहता है।

(२) गुरु मुख मन और इन्द्रियों को रोकता है और चित्त से दीन रहता है और ताने के वचन को सहता और नसीहत को प्यार से सुनता है और अपनी बढ़ाई नहीं चाहता।

(३) गुरु मुख किसी पर जबरदस्ती नहीं करता और सब की खातिरदारी और सेवा करने को तैयार रहता है। औरों का उपकार करना चाहता है और अपनी पूजा और निष्ठा की चाह नहीं रखता है और सतगुरु की याद और उनके चरणों में लौलीन रहता है।"

(४) "गुरुमुख गरीबी और दीनता नहीं छोड़ता है। और जब कोई उसकी निन्दा करे या निरादर या अपमान करे तो दुखी नहीं होता है बल्कि उसमें अपने लिये भलाई समझता है।"

(५) "गुरुमुख सेवा में आलस्य नहीं करता और कभी खाली बैठना नहीं चाहता।"

(६) "गुरुमुख गरीबी और सादगी से रहता है और जो सामान मिल जाय रूखा सूखा

(२) मनमुख इंद्रियों का मर्दन पसन्द नहीं करता। और किसी से दबना या उसका हुक्म मानना नहीं चाहता है। और दूसरे की बढ़ाई की बर्दाश्त नहीं रखता है।"

(३) "मनमुख औरों पर हुक्म चलाता है और सेवा लेता है। और अपना मान चाहता है। और बिना कुछ अपने मतलब के औरों से प्रीति नही करता और खुशी से अपनी पूजा और निष्ठा कराता है। और चरणों में लौ-लीन नहीं रहता।"

(४) "मनमुख निन्दा और अपमान से डरता है और अपना निरादर खुशी से नहीं सहता और बढ़ाई चाहता है।"

(५) "मनमुख तन का आराम चाहता है और सेवा में सुस्ती करता है।

(६) "मनमुख सदा अच्छे अच्छे पदार्थ को चाहता है और उनको प्यार करता है और रूखे

मोटा झोटा उसी में खुशी से गुजाराकरने को तैयार रहता है।

(७)"गुरुमुख संसारी पदार्थों और दुनियाँ के जाल में नहीं अटकता है और उनकी लाभ और हानि में दुखी सुखी नहीं होता है और जो कोई ओछी बात को कहे तो उस पर गुस्सा नहीं करता और सदा अपने जीव के कल्याण और सत्गुरु की प्रसन्नता पर नजर रखता है।"

(७) "गुरुमुख हर बात में सफाई और सचाई रखता है और चित्त से उदार रहता है। और औरों से सलूक करता है। औरों का फायदा चाहता है और आप थोड़े में सन्तोष करता है। और दूसरों से लेने की चाह नहीं रखता।'

(६) "गुरुमुख संसारीजीवी से बहुत प्यार नहीं करता है और भोगों की चाह और आशा नहीं रखता और सैर तमाशे नहीं चाहता है। उसको केवल चरणों की प्राप्ति की चाह रहती है और उसके आनन्द में आसक्त रहता है।

सूखे पदार्थों को पसन्द नहीं करता हैं।"

(७) "मनमुख संसार और उसके पदार्थों का बड़ा ख्याल रखता हैं और उनकी हानि लाभ में जल्द सुखी दुखा होता है। और जो कोई कड़ुवा वचन कहे तो फौरन गुस्सा से भर जाता है और सतगुरु की मेहर और सम-र्थता का भरोसा और ख्याल नहीं रखता।"

(८) "मनमुख लालची है। सदा औरों से लेने को तैयार रहता हैं और देना नहीं चाहता है। दूसरे का ख्याल नहीं रखता। और तृष्णा बढ़ाता है और सफाई नहीं बरतता।'

(६) "मनमुख संसारी जीवों और पदार्थों की प्रीति करता है और भोग विलास चाहता है। और सैर तमाशे में खुश होता है।"

(१०) "गुरुमुख जो काम करता है सत्गुरु की प्रसन्नता के लिये और उनसे दया और मेहर चाहता है। वह उन्हीं की स्तुति करता है और उन्हीं की बढ़ाई चाहता है और संसार की चाह नहीं रखता।"

(११) "गुरुमुख किसी से विरोध नहीं करता बल्कि विरोधी से भी प्यार करता है। और कुल कुटुम्ब, जाति पांति और बड़े आदमियों से दोस्ती का अपने मन में अहंकार नहीं लाता और प्रेमी और सच्चे परमार्थी जीवों से ज्यादा प्यार करता है और सत्गुरु के चरणों का प्रेम सदा जगाये रखता हैं और उनकी दया और मेहर नित्य प्रति विशेष हासिल करना चाहता है।"

(१२) "गुरुमुख गरीबी और मुफलिसी (निर्धनता) से नहीं घबराता और जो तकलीफ आ पड़े उसको धीरज के साथ सहता है और सत्गुरु की दया का भरोसा रखता है और उनका शुक्र करता रहता है।"

(१०) "मनमुख जो काम करता है उसमें कुछ न कुछ अपना मतलब या स्वाद देख लेता है। क्योंकि बिना मतलब के उससे कोई काम नहीं बन सकता और सदा अपना आदर और स्तुति चाहता है और संसारी चाह उसके जबर रखती है।"

(११) मनमुख बहुत कुटुम्ब और मित्र चाहता है और धनवान और हुकूमत वालों से ज्यादा मुहब्बत करता है और उनकी मित्रता और अपनी जाति-पांति का अहंकार रखता और दिखावे का काम बहुत करने को चाहता है और सत्गुरु की प्रसन्नता का खयाल कम रखता है।"

(१२) "मनमुख बहुत जल्द तकलीफ से घबराकर पुकारने लगता है और निर्धनता से दुखी होकर इधर उधर शिकायत करता है।

(१३) "गुरुमुख सब काम को मौज के हवाले से करता है और चाहे भला होवे चाहे बुरा होवे अपना अहंकार उसमें नहीं लाता है और अपनी बात का पक्ष नहीं करता। और औरों की बात को ओछी करके नहीं दिखलाता। और झगड़े के कामों में नहीं पड़ता। और हमेशा सत्गुरु की मौज निहारता रहता है और उनका गुन गाता हुआ चलता है।"

(१३) "मनमुख सब कामों में अपना आपा ठानता हैं। और अपने मजे और नफे के लिये झगड़े और रगड़े के कामउठाता रहता है। और अपनी बात की पक्ष में क्रोध करने और लड़ने को तैयार हो जाता है।"

(१४) "गुरुमुख नई-नई चीजों में और बातों में नहीं अटकता क्योंकि वह देखता है कि उनकी जड़ संसार है। और अपने गुण संसार से छुपाये चलता है और अपनी तारीफ कराना नहीं चाहता और जो कोई बात सुने या देखे उसमें अपने मतलब का नुक्ता जो सत्गुरु की प्रीति और प्रतीति बढ़ावे छाँट लेता है और सदा सत्गुरु की महिमा गाता रहता है जो कि सब गुणों का भंडार है।"

(१४) "मनमुख चाहता है कि नित नई नई चीजें देखे और नई बातें सुने और हर किसी का भेद और गुप्त बात दर्याफ्त करना चाहता है और इधर उधर से बातें चुनकर अपनी बुद्धि और चतुरता को बढ़ाता यह सबको जताकर अपनी महिमा कराना चाहता है और अपनी स्तुति में राजी रहता है।"

(१५) "गुरुमुख जो काम परमार्थी करता है धीरज के साथ

(१५) "मनमुख हर बात में जल्दी करता है और सब काम

करता है और हमेशा सत्गुरू की मेहर और दया का भरोसा और उनके चरणों में निश्चय पक्का रखता है।"

जल्दी के साथ पूरे करना चाहता है और इस जल्दी में सत्गुरु की मेहम का भरोसा और उनके वचन का निश्चय भूल जाता है।

—×—

अट्ठावनवाँ वचन

शरणागत और मौज (भगवत् इच्छा) का मार्ग

गुरुमुखता शरणागति और मौज का मार्ग है। और गुरु ख्याली केन्द्र है जिसके सहारे इस पर चला जाता है। बिना गुरु की सहायता के न इसकी समझ आती है और न इस पर चला जा सकता है।

इस दुनियाँ का पैदा करने वाला बुरा है या भला है। यदि वह भला है तो फिर उसकी बनाई हुई दुनियां को बुरा क्यों कहते हो? अच्छा कारीगर अच्छा काम करता है। बुरा कारीगर बुरा काम करता है। पूर्ण कारीगर ने यदि उसे बनाया है तो उसमें तनिक भी बुराई या दोष नहीं होना चाहिए यदि तुमको दुनियाँ में बुराई दिखाई देती है तो फिर उसके बनाने वाले को सच्चा और पूर्ण कारीगर मत कहो। वह कुछ और ही होगा। दुनियाँ को बुरा बतलाने से तुम अपने वचन, कर्म और मन से उसे दोषयुक्त कारीगर सिद्ध करते हो।

जिस सम्प्रदाय वाले को देखिये दुनियाँ की शिकायत करता है और उठते-बैठते उसे कोसा करता है। क्या यह कोसना उचित है? तुम क्यों ऐसा करते हो? इसका कोई कारण भी है अथवा यों ही व्यर्थ जिभ्या को भ्रष्ट करते हो। यह तो ईश्वर की पूजा नहीं है और न धर्म का अभिप्राय है।

तुम कहोगे कि दुनियाँ में कमी है, अकाल है, युद्ध है, दरिद्रता है और तरह तरह की आपत्तियाँ हैं। इनसे किस प्रकार आँखें मीची जायें। साँप विच्छु और कितने ही हिंसक जीव हैं। यह सब दुखदाई हैं इनको दृष्टि से कैसे हटाया जासकेगा। क्या यह गलत है ? हम कहते हैं कि यह जैसे हैं वैसे हैं। इनसे दुनियां में कोई भी दोष नहीं है। दुनियाँ तो पूर्ण ही है। वह जैसी है वैसी है। केवल तुम्हारी दृष्ट का दोष है। ईश्वर की दुनियाँ पूर्ण कारीगरी, पूरी शुभ भावना और पूर्ण शुभ संकल्प का चित्र है। तुमने जैसी दृष्टि बनायी है वैसे विचार तुम्हारे मन में उत्पन्न होते है और वैसे ही विचारों के अधीन तुम बातचीत करते हो और बातचीत के सिलसिले में उसी प्रकार के कर्म तुम्हारे हाथ से होंगे। कर्म,मन,और वचन के संस्कारों को साथ लिये हुए तुम सुख और दुख के दृश्य देखते हो और सुख दुख भोगते हो। इसमें ईश्वर का क्या अपराध है ? काम करो तुम और अपराध ईश्वर के सिर थोपो, यह बात अच्छी तो नहीं है ।

ईश्वर की रचना में जो कुछ हो रहा है वह मौज और मसलहत (इच्छा) के साथ हो रहा है। उसकी मौज और मसलहत में 'क्यों ?' और किस प्रकार ?' के प्रश्न करने की गुंजाइश नहीं है। कारण यह कि जो कुछ हमारी शिकायत है वह वास्तव में ईश्वर वाली रचना से नहीं है किन्तु अपने आप वाली रचना से है। मनुष्य जो अपनी दुनियां बनाता है उसी का दुखड़ा रोया करता है। ध्यान से देखा जाय तो उसे इश्वर की दुनियाँ से इतनी शिकायत नहीं हैं।

ईश्वर की दुनियां और है और मनुष्य की दुनियाँ और है और ब्रह्म की दुनियाँ और ही है। यह सब भिन्नता मनुष्य ही की दृष्टि से हैं और इनका कारण उसके वास्तविक भ्रम के

विचार हैं। वह भ्रम में पड़ गया है और भ्रम के कारण उसे दुख सुख अपनी स्वार्थी दृष्टि के कारण प्रतीत होते हैं। इस स्वार्थ की जड़ उसका अहंकार है। यदि मनुष्य उसे सुधार कर ले तो फिर उसे दुख सुख का भ्रम जाता रहे।

एक स्त्री है वह ईश्वर की दुनियाँ में उसकी बनायी हुई है वह स्त्री की दृष्टि से हर दशा में समान है मगर मनुष्य उसे अपनी दुनियां में अपना बना लेता है। जब वह ईश्वर की दुनियाँ की वस्तु को अपनी दुनियाँ की वस्तु बनाने लगता है तो उस स्त्री में भिन्न-भिन्न प्रकार के अहंकारों के प्रभाव पड़ने से वह अनेक रूप वाली हो जाती है। वह किसी की ताई है। किसी की चाची है। किसी की बहिन है किसी की माँ, पत्नी और फूफी है। एक ही रूप जिस समय भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देने लगता है तो खेंचातान उत्पन्न हो जाती है और खेंचातान का परिणाम दुख होता है। इसी प्रकार चूंकि मनुष्य की दुनियाँ में अहंकार के कारण से अनेकता है। वह खेंचातान से खाली नहीं रहती। मनुष्य उसी का उपाय सोचने लगता है। इस प्रकार शिकायतों की भरमार हो जाती है जो उसी के अपने गलत भ्रम का परिणाम है।

इस अनेकता की खेंचातान से छुटकारा पाने का ढंग गुरु की भक्ति है। चारों ओर से जब चित्त को समेटकर एक गुरु के चरणों में लगाया जाता है तो अनेकता की ओर से स्वयं दृष्टि हटने लगती है। उसे आप ही आप विश्वास होने लगता है कि यहाँ जो कुछ है, उसमें यदि अपना अहंकार और अपना स्वार्थ न लगाया जाय तो वह मौज और मसलहत के अनुसार है। इस प्रकार के विचार और विश्वास के अनुसार चलने को मौज का मार्ग और शरणागति का रास्ता कहा जाता है।

प्रारम्भ ही में मनुष्य ऐसा नहीं हो जाता। रोग के इलाज

में थोड़ी देर लगती है। जिस जिस तरह अहंकार का रोग दूर होता जाता है उतनी ही बुद्धि शुद्ध होती जाती है और शिकायतें मिटने लगती हैं। जब वह बिल्कुल ही अपना-अपनी दुनियाँ से दृष्टि को हटा लेता है अर्थात् स्वार्थ और अहंकार कम होने लगता हैं, उसे ईश्वर की दुनियाँ का दृश्य उतना दुखदायी प्रतीत नहीं होता। मगर अभी उसका अज्ञान पूर्णतया दूर नहीं हुआ। जड़ फिर भी बाकी हैं लेकिन गुरु की कृपा से ब वह इसे भी छोड़ जाता हैं और ब्रह्म की दुनियां का अध्ययन करने लगता हैं तब उसका भ्रम नहीं रहता। उसी का अपना अहंकार ब्रह्म के अहंकार में लीन हो जाता हैं।

ब्रह्म का अहंकार मनुष्य के अहंकार से भिन्न हैं। यह प्रकृति का नियम हैं और व्यापक नियम है। सारे जगत का उसके आश्रय है। जिस प्रकार किसी कल के समस्त में गुथे हुए गति और स्थिति का दृश्य दिखाते जब मनुष्य इस सर्वव्यापक नियम से मिलकर ता है तो ब्रह्माण्ड के काम का सिलसिला सुन्दर ता है। उसका प्रबन्ध ज्यों का त्यो रहता है लेकिन दुख और कष्ट भान नहीं होता।

दुख और कष्ट का भान तो वहाँ होता है जहाँ कल का ई पुर्जा अकड़ जाता हैं या अड़ जाता है। उसी की दुरुस्तगी के लिये लुहार या कारीगर का हथौड़ा उसके ठीक करने और अकड़ छुड़ाने के लिये आ मौजूद होता है। यह अड़ना और अकड़ना मनुष्य का आंशिक और व्यक्तिगत अहंकार है। इसी में दुख की जड़ है और यही अज्ञान का मूल कारण है जो कुछ संसार में मनुष्य पर विपत्ति व आपत्ति आती हैं वह सब अहंकार के सुधार के लिये आती हैं। इसमें भी बहुत बड़ी मौज और मसलहत छिपी हुई है। जो उसे एक बार समझ

लेता है वह फिर भूलकर भी शिकायत नहीं करता। बल्कि उसे विश्वास ही रहता है कि यह दुख भी छिपे रूप में कृपा ही के रूप में है। इस विश्वास का अभ्यास और उसका पक्कापन उसे थोड़े ही समय में कुछ का कुछ बना देता है।

जब तक अकड़ रहेगी विपत्तियों का आना आवश्यक है। इसकी कोई औषधि नहीं है। अकड़ को छोड़ दो, विपत्ति मिट जायेगी। अकड़ के साथ ही वह रहती है। रस्सी में उलझन की अकड़ पड़ गई। उसे सुलझाने में खेंचातानी होती रहती है और यह खेंचातान उस समय बराबर मौजूद रहती है, जब तक उलझन नहीं जाती। यह नियम प्रकृति के प्रत्येक व्यक्ति में दिखायी देता है और हर प्रकार के काम में चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, हार्दिक हो या आत्मिक, लोक चाहे परलोक का, तात्पर्य कि वह सर्वत्र प्रतीत

गुरु भक्ति से यह सुगमता से दूर हो जाता

गुरु भक्त की पकड़ दुनियाँ के किसी काम क्योंकि दुनियाँ की किसी वस्तु में उसकी आसक्ति नहीं होता। कोई आदमी मर गया वह समझ लेत कुछ रहस्य होगा। धन गया उसने विश्वास कर के चले जाने में ही कुशलता रही होगी। वह उ दुनियाँ जो कुछ है वह मालिक ही की है, उसका नहीं है। फिर उनसे पृथक होने से उस दुख क्यों होन

मेरा मुझको कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मोर॥

—०

उनन्ठवाँ वचन

मौज का एक दृष्टान्त

किसी जंगल में एक साधु रहता था। उसकी जिभ्या पर [illegible] रहते थे— 'राम की मौज ! जो कुछ होता है राम [illegible]ज से होता है और राम की मौज के होने ही में सच्ची [illegible]लाई है।" वह इसी विचार में मस्त रहता था।

एक दिन उस देश का राजकुमार मन्त्री और खजानची के लड़कों को साथ लिये हुए शिकार को निकला। यह तीनों मित्र थे और सदा साथ रहते थे। साधु के झोंपड़े की तरफ से वे निकले। थके, माँदे भूखे प्यासे थे। साधु से मिले कहा कि हम थके हुए हैं। साधु का जैसा स्वभाव था, उसके अनुसार उसने उनका वृतान्त सुनकर कहा—"राम की मौज ! जो कुछ होता है राम की मौज से होता है और राम की मौज ही में भलाई है।" राजपुत्र, मन्त्री पुत्र और खजानची पुत्र तीनों ही को यह बात बुरी लगी। मगर चूंकि साधु ने उनको प्रेम से पानी पिलाया, भोजन कराया और अपने झोंपड़े में विश्राम के लिये स्थान दे दिया, ये उसकी बातों को भूल गये। जब धूप की तेजी कुछ कम हुई। यह जंगल में शिकार के लिये निकले। हिरण का पीछा किया। हिरण कनौती बदलता हुआ उन्हें एक ऐसी जगह ले गया जो भयानक थी तीनों ही गिरे राजकुमार की आँख फूट गई। बजीर पुत्र की टाँग टूट गई। खजानची पुत्र का हाथ बेकाम हो गया। तीनो ही कष्ट से व्याकुल होकर कराहने लगे। अभी दिन कुछ बाकी था कि उनके कान में आवाज आयी कि "राम की मौज ! जो कुछ होता है राम की मौज से होता है और राम की मौज के होने ही में भलाई है।" यह सुनाता हुआ साधु उस जगह आया जहाँ यह तीनों भूमि

पर पड़े थे साधु ने उनकी दशा देखी दौड़ गया गाँव से आदमी पकड़ लाया और घायलों को अपने झोंपड़े में उठा लाया। औषधि की। इन्हें आराम तो हो गया मगर यह हमेशा के लिये अंगहीन हो गये। राजपुत्र एक आँख का काना, दीवानपुत्र एक टाँग का लंगड़ा और खजानची पुत्र एक हाथ का लूला हो गया। साधु ने उनसे पूछा कि यह दशा किस तरह हुई। उन्होंने अपना कुल वृतान्त सुनाया। साधु अपने स्वभाववश बोल उठा—"राम की मौज ! जो कुछ होता है राम की मौज होता हैं और राम की मौज के होने में ही सच्ची भलाई है।" तीनों को यह बात बुरी लगी और शत्रुता की ठान ली और कृतज्ञता को तिलांजलि देकर इस निर्दोष साधु को हानि पहूँचाने पर तुल गये। वे इस हानि पहुँचाने के उद्देश्य को हृदय में रखकर चल दिये। आराम होने पर परामर्श किया कि साधु ने चूंकि उनकी आपत्ति के समय हर्ष प्रकट किया है उससे बदला लेना चाहिए।

वे जंगल में आये। उस दिन साधु लकड़ी चुनने के लिये झाड़ियों की ओर गया हुआ था। किसी वृक्ष से उसका सिर टकरा गया। रक्त जाने से वह बेहोश हो गया और कांटे-कटीले की झाड़ियों में गिर पड़ा जिससे उसकी देह में और भी खरोंच आ गई। ये लोग झोंपड़े में आये। ढूंढ़ा। साधु का कहीं पता नहीं लगा। विवश होकर निराशा में वापस चले गये। जब साधु को होश आया वह उसी बेबसी की दशा में पड़ा हुआ हाँक लगाता रहा—"राम की मौज ! जो कुछ होता है राम की मौज से होता है और राम की मौज के होने में ही सच्ची भलाई है।" वह इसी धुन में मस्त था। गाँव के लोग जो उस के श्रद्धालु थे, झोंपड़े में उसे न पाकर जगह-जगह ढूंढ़ते वहाँ आये जहाँ वह काँटों में उलझा हुआ अपनी हांक लगा रहा

था । ज्यों त्यों करके उसे निकाला । घरलाये, मरहम पट्टी की और वह अच्छा हो गया ।

दूषित हृदय वाले युवक साधु को दण्ड देने के ख्याल को नहीं भूले थे । कुछ दिनों पश्चात वह फिर उसी दुर्भावना से निकले । इस बार वे नाव में बैठकर आये थे क्योंकि साधु का झोंपड़ा नदी के किनारे पर था मगर साधु वहाँ नहीं था । पूछ गछ करने पर ज्ञात हुआ कि वह किसी निकटवर्ती गाँव में ब्रह्म भोज खाने गया है । यह भी भेष बदले हुए वहाँ पहुंचे । साधु राह में मिला । युवकों ने कहा—"चलो नाव पर बैठ लो । हम तुमको झोंपड़े पर पहुँचा देंगे ।" साधु हंसा—'राम की मौज जो कुछ होता है राम को मौज से होता है और राम की मौज के होने में ही सच्ची भलाई है ।" वे चारों नाव पर बैठे । राह में गहरा जल था । तीनों ने साधु को बाँध लिया और जल म धकेल दिया । यह गोते खाने लगा और वह खुश होकर अपनी राह लगे । अपनी समझ से उन्होंने साधु को दण्ड दे दिया । उनको शाम हो गई थी । आकाश पर अन्धेरा छा गया था । यह नाव को खेते चले आ रहे थे कि दूसरी नाव से मुठभेड़ हो गई । इस पर भील सवार थे । वह उछल कूदकर इनकी नाव में आये । यह तीन थे और वह दस थे । खचातान हुई और भीलों ने बाँधकर अपनी नाव में रख लिया । राह में भीलों ने परामर्श किया— देखना चाहिये कि यह कैसे आदमी हैं ।" जब दीपक के उजाले में वह देखने लगे तो एक काना, एक लगड़ा और एक लूला दिखाई पड़ा । भीलों ने कहा, 'राम—राम ! यह तो किसी काम के आदमी नहीं हैं । इनका बलिदान ठीक न होगा । काली माता को अंगहीन आदमियों का बलि-दान पसन्द नहीं आता ।" क्रुद्ध होकर उन्होंने इन्हें पानी में धकेल दिया और जिधर से आये थे उधर चले गये ।

मालिक की मौज ! वह साधु किसी तरह डूबने से बच गया था और उसी जगह बैठा हुआ हाथ पाँव मल रहा था क्योंकि रस्सियों से जकड़े जाने पर उसे चोट आ गई थी इस ने पानी में धमाके की आवाज सुनी और वह जान गया कि आदमी पानी में हाथ-पाँव मार रहे हैं। यह साधु था। साधु सहानुभूति वाले होते हैं। चन्द्रमा के प्रकाश में वह उसी प्रकार अपनी बेतुकी हाँक लगाता हुआ धम से कूद पड़ा। एक एक को निकालकर बाहर लाया। यह लज्जित थे। इन्होंने तो हाँक लगाने के कारण साधु को पहिचान लिया मगर साधु उन्हें रात के समय न पहिचान सका। फिर अपने झोंपड़े में लाया। सेवा सुश्रूषा की। आग जला दी कि उनको गर्मी पहुंचे मगर जिस समय उसकी दृष्टि इन पर पड़ी वह जोर से अट्टहास करके चिल्ला उठा—'राम की मौज ! जो कुछ होता है राम की मौज से होता है। राम की मौज हो के होने में सच्ची भलाई है।"

दूसरे दिन प्रातः ये लज्जित होकर अपने महलों को चले गये फिर साधु को ओर अपना विचार बदल दिया कि वह बुरा आदमी नहीं है। ये शब्द उसके तकिया कलाम है और वह मौज के अधीन रहता है।

—×—

साठवाँ बचन

मौज की व्याख्या

यह दुनियाँ हमारी नहीं है किन्तु मालिक की है। वह जानता है कि इसकी भलाई किस बात में है। वह पूर्ण बोध और सर्वज्ञ है। वह हमारे आधीन नहीं है और न उसका काम ही हमारी सहायता या सुधार के अधीन है। उसने सोच समझ

—(शेष अगले अंक में)

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ०

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 170.

श्रीमान Chikwar Narsimlu Book Seller
V & P.O. Banswada Mandal
Nizamabad. A.P.
503187

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़